ISSN No. : 2394-0344 Remarking : Vol-2* Issue-4*September 2015

ब्रिटिश भारत में प्रान्तीय स्वायत्तता की कार्यान्विति, झाँसी, जालौन हमीरपुर उपचुनाव 1937 तथा मोहम्मद अली जिन्ना

सुरेन्द्र पाल सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
बैसवारा पी0जी0 कालेज,
लालगंज, रायबरेली

सारांश

जुलाई 1937ई0 में कांग्रेस ने 6 प्रान्तों में उत्तर प्रदेश, बिहार, मद्रास, बम्बई, उड़ीसा और मध्य भारत प्रान्त में अपने मंत्रिमण्डल बना लिए थे, बाद में कांग्रेस ने उत्तर पश्चिमी सीमा प्रान्त और असम में भी अन्य दलों से मिलकर मंत्रिमण्डल बना लिये थे। इस प्रकार कांग्रेस ने 11 प्रान्तों में से 8 प्रान्तों में महत्वपूर्ण विजय प्राप्त की थी। मंत्रिमण्डलों का निर्माण करते समय कांग्रेस द्वारा किसी दल का सहयोग न लेना सवैधानिक रूप से गलत नहीं था। कांग्रेस का 8 प्रान्तों में पूर्ण बहुमत था और सरकार बनाने में वह पूर्ण रूप से सक्षम थी परन्तु व्यवहारिक राजनीति के दृष्टिकोण से कांग्रेस का यह कार्य संभवतः बहुत सही नहीं था। आदर्शो के नाम पर मुस्लिम लीग के साथ सहयोग का परित्याग तत्कालीन तथ्यों के साथ मेल नहीं खाता था। कांग्रेस का वह अत्यन्त मूर्खतापूर्ण कार्य था, वह एक घातक कदम था, जिसके लिए आगे चलकर भारत को एक बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। देश दो भागों में बट गया, भारत और पाकिस्तान। यदि कांग्रेस मुस्लिम लीग के साथ मिलकर मंत्रिमण्डलों का निर्माण करती तो हो सकता था कि देश को इतनी बड़ी कीमत न चुकानी पड़ती।

मुख्य शब्द : मंत्रिमण्डल, कांग्रेस, संवैधानिक, मुस्लिम लीग।

प्रस्तावना

मोहम्मद अली जिन्ना के राजनीतिक जीवन का समारम्भ भारत की उदारवादी राष्ट्रीय राजनीति के दायरे में हुआ था। अंग्रेजों के विरूद्ध एक साझा राष्ट्रवादी मोर्चा बनाने के उद्देश्य से उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण की तथा वह काफी समय तक उसके वार्षिक अधिवेशनों में नियमित रूप से उपस्थित होते रहे। मिन्टो–मॉर्ले सुधारों के द्वारा मुसलमानों के लिए पृथक् निर्वाचन क्षेत्रों का प्रावधान किया गया था। परन्तु जिन्ना ने अपने राजनीतिक जीवन के आरम्भिक चरण में इस व्यवस्था का कभी समर्थन नहीं किया। वस्तुतः उन्होंने मुस्लिम लीग की सदस्यता उसके जन्म के छः वर्ष बाद यानी 1913 में ग्रहण की थी। इस संबंध में एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि 1916 के लखनऊ समझौते पर कांग्रेस के साथ हस्ताक्षर करने के लिए मुस्लिम लीग को राजी कराने में जिन्ना की भूमिका अग्रणी रही थी। राष्ट्रवादी जिन्ना का एक साम्प्रदायिक नेता के रूप में विकास निःसन्देह एक ऐसी पहेली है जिसका उत्तर पाना कठिन है। एम0 सी0 छागला ने लिखा है कि, ''उनका राष्ट्रवाद इतना वास्तविक था, इतना स्वाभाविक था और इतना टिकाऊ था, कि यह आशा करना कि घड़ी के पेन्डुलम की भाँति एक दिशा से बिल्कुल विपरीत दूसरी दिशा में चले जायेंगे, मानव प्रकृति की साधारण अपेक्षाओं से सर्वथा प्रतिकूल लगता था।''[A] यह जिन्ना का अपना व्यक्तित्व था, उनकी इच्छा शक्ति थी और उनका आत्मविश्वास था, जिन्होने देश के विभाजन को अनिवार्य बना दिया था।

1937 के निर्वाचन में कांग्रेस को असाधारण सफलता प्राप्त हुई थी। ब्रिटिश भारत के 11 प्रान्तों में से [B]8 प्रान्तों में उसे मंत्रिमण्डल निर्मित करने का गौरव प्राप्त हुआ था। वस्तुतः ऐसा होना स्वाभाविक भी था, क्योंकि अपने जन्म के समय से ही उसने उन सब लोगो को अपने झंडे के नीचे संगठित किया था जो देश की स्वतंत्रता और अखण्डता के लिए अपने को समर्पित करने के लिए उद्यत थे। जिन प्रान्तों में कांग्रेस ने अपने मंत्रि मण्डल बनाये थे। उनमें उसने अपने मुस्लिम सदस्यों को भी स्थान दिया था, जिससे यह प्रमाणित होता था कि कांग्रेस एक असाम्प्रदायिक संगठन है और उसमें देश के सभी लोग शामिल हैं, चाहे उनका धर्म और सम्प्रदाय कुछ भी क्यों न हो। इसके विपरीत इस

चुनाव में मुस्लिम लीग ने मुँह की खायी थी। ब्रिटिश भारत के किसी भी प्रान्त में उसे मंत्रिमण्डल बनाने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ था। मुस्लिम बहुल प्रान्त पान्त पंजाब में यूनियनिस्ट पार्टी की सरकार बनी थी और बंगाल में कृषकार लोक पार्टी के नेता फजलुलहक के नेतृत्व में एक मिली–जुली सरकार बनी थी। उत्तरी पश्चिमी प्रान्त जिसमें मुसलमानों का पूर्ण बहुमत था, कांग्रेस का मंत्रिमण्डल था और सिन्ध में एक ऐसा मंत्रिमण्डल बना था जिसे कांग्रेस का समर्थन प्राप्त था।

मंत्रिमंडलों की रचना करते समय कांग्रेस ने किसी अन्य दल का सहयोग नहीं लिया था। जैसा कहा जा चुका है कि 1937 के चुनाव में कांग्रेस और लीग के बीच एक अलिखित समझौता था जिसके अधीन कांग्रेस ने यू0पी0 में नगरीय मुस्लिम निर्वाचन क्षेत्रों में अपने प्रत्याशी खड़े नहीं किए थे। लीग को आशा थी कि सरकार बनाते समय कांग्रेस उसके प्रतिनिधियों को उसमें अवश्य स्थान देंगी। परन्तु कांग्रेस ने ऐसा न करके लीग के एक–आध सदस्य को मंत्री बनाने का प्रलोभन देकर अपने में मिला लिया अथवा किसी निर्दलीय मुस्लिम विधायक को कांग्रेस की सदस्यता प्रदान करके मंत्रिमण्डल में शामिल कर लिया। [C]यू0पी0 में उसने लीग के विधान मण्डलीय पार्टी के नेता चौधरी खलीकुन्जमा से बातचीत अवश्य चलाई थी, परन्तु ऐसा करते समय उसने अखिल भारतीय मुस्लिम लीग के अध्यक्ष तथा उसकी कार्यकारिणी की पूर्ण रूप से उपेक्षा की थी। बम्बई प्रेसीडेंसी में भी मंत्रिमंडल की रचना करते समय वहाँ के विधान मंडलीय कांग्रेस पार्टी के नेता बी0जी0 खेर की जिन्ना से बातचीत हुई थी। खेर ने जिन्ना से अनुरोध किया था कि वह उन्हें मंत्रिमंडल में शामिल करने के लिए मुस्लिम लीग के दो प्रतिनिधि दें। जिन्ना ने उनका यह अनुरोध स्वीकार कर लिया था तथा खेर को यह आश्वासन दिया था कि मुस्लिम लीग उनके साथ पूर्ण सहयोग करेगी। परन्तु यह बात कांग्रेस आला कमान के, विशेषतः सरदार पटेल के गले के नीचे नहीं उतरी। उन्होने खेर को यह आदेश दिया कि मुस्लिम लीग के दो प्रतिनिधियों को सरकार में केवल इस शर्त पर शामिल किया जा सकता हैं कि वह मुस्लिम लीग की सदस्यता से त्यागपत्र देकर कांग्रेस में शामिल हो जायें। स्पष्टतः यह शर्त जिन्ना को मान्य नहीं हो सकती थी।[1]

मंत्रिमंडलों का निर्माण करते समय कांग्रेस द्वारा किसी दल का सहयोग न लेना सैद्धान्तिक रूप से गलत नहीं था। कांग्रेस का ब्रिटिश भारत के आठ प्रान्तों में पूर्ण बहुमत था और सरकार बनाने के लिए वह पूर्ण रूपेण सक्षम थी। परन्तु व्यवहारिक राजनीति के दृष्टिकोण से कांग्रेस का यह काम सम्भवतः बहुत सही नहीं था। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ0 आर0सी0 मजूमदार ने लिखा है, ''आदर्शों के नाम पर मुस्लिम लीग के साथ सहयोग का परित्याग तत्कालीन तथ्यों के साथ मेल नहीं खाता था, वह अत्यन्त मूर्खतापूर्ण कार्य था, वह लगभग एक घातक कदम था जिसके लिए भारत को एक बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी।[2] यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने भी अपनी पुस्तक ''इन्डिया विन्स फ्रीडम'' में इसी प्रकार के मत को व्यक्त किया है।

मंत्रिमंडल बनाने के बाद कॉंग्रेस ने यू0पी0 में मुस्लिम जन सम्पर्क कार्यक्रम बनाया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य यह था कि बिना किसी बिचौलिए के कांग्रेस मुसलमानों के साथ सीधा सम्पर्क स्थापित करें। इस कार्यक्रम का मुसलमानों के ऊपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। उनके बीच अब ''इस्लाम खतरे में है'' का नारा लगाया जाने लगा, उनमें यह आशंका पैदा की जाने लगी कि कांग्रेस उन्हें मिटाने का कार्यक्रम बना रही है। इस भय ने यू0पी0 के मुसलमानों को मुस्लिम लीग की गोद में धकेल दिया। कांग्रेस ने मुस्लिम जन सम्पर्क का कार्यक्रम मुसलमानों को असाम्प्रदायिक बनाने के उद्देश्य से बनाया था, परन्तु इसका परिणाम उल्टा हुआ। यू0पी0 के मुसलमान अब उस संगठन के प्रभाव में थे जिसमें ब्रिटिश भक्त जमींदारों और ताल्लुकेदारों का बाहुल्य था।

कांग्रेस के दो वर्ष के शासन में कुछ और ऐसी बातें हुई; जिन्होने देश के प्रमुख धार्मिक सम्प्रदायों हिन्दू और मुसलमानों को एक दूसरे से अलग करने में भूमिका अदा की। मुस्लिम लीग ने कांग्रेस के विरूद्ध अनर्गल प्रचार करना आरम्भ कर दिया। यह कहा जाने लगा कि कांग्रेस शासित प्रान्तों के मुसलमानों के ऊपर जुल्म ढाये जा रहे हैं, इस बात को सिद्ध करने के लिए तथ्यों को जान बूझकर तोड़ा–मरोड़ा गया। इस अत्याचारों का उल्लेख यू0पी0 में पीरपुर रिपोर्ट में और बिहार में शेरीफ रिपोर्ट में किया गया। इनके अतिरिक्त कुछ मुस्लिम बुद्धिजीवियों ने, जिनमें इलाहाबाद विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के सर शफात अहमद खाँ भी शामिल थे, प्रचारात्मक साहित्य का सृजन किया जिसमें यह बेसिर–पैर की बात कही गई कि कांग्रेस राज्य वस्ततः हिन्दू राज्य है और यदि यह बना रहा तो देश से मुसलमानों का सफाया हो जायेगा। यह कहा गया कि कांग्रेसी मंत्रिमंडलों ने मुस्लिम संस्कृति को नष्ट करने के लिए गांधी के निर्देश पर शिक्षा की बार्धा योजना तैयार की है। इस योजना के माध्यम से कांग्रेस हिन्दू संस्कृति को पुनर्जीवित कर रही है और मुस्लिम बालकों में यह भावना पैदा कर रही है कि हिन्दू संस्कृति की अपेक्षा मुस्लिम संस्कृति हेय है।

स्पष्टतः कांग्रेसी मंत्रिमंडलों की स्थापना से जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग से अनुकूल प्रतिक्रिया की अपेक्षा नहीं की जा सकती थी। 1937 में लीग के वार्षिक अधिवेशन में लखनऊ में जिन्ना ने अपने अध्यक्षीय भाषण में यह शिकायत की थी, ''जहाँ भी वे (कांग्रेसी) बहुमत में होते हैं और जहाँ उन्हें यह उपयुक्त लगता है, वे मुस्लिम लीग के साथ सहयोग करने से इन्कार कर देते हैं और यह माँग करते हैं कि लीग उनक आगे बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दें तथा उनके प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर कर दे।''[3] अपने इसी भाषण में जिन्ना ने एकता के लिए किए गये अपने प्रयासों का उल्लेख करते हुए कहा, ''बहुसंख्यक सम्प्रदाय के साथ किसी भी प्रकार का समझौता सम्भव नहीं है, क्योंकि कोई भी हिन्दू नेता जो अधिकार पूर्वक बात कर सकता है, किसी सम्मानपूर्ण समझौते की इच्छा व्यक्त नहीं करता। सम्मानपूर्ण समझौता समान लोगो के बीच ही सम्भव है और जब तक दोनो पक्ष एक दूसरे का सम्मान नहीं करते तथा एक दूसरे से डरते नहीं, समझौते के लिए कोई ठोस आधार नहीं हो सकता। यदि दुर्बल पक्ष शान्ति का प्रस्ताव प्रस्तुत करेगा तो उसे दुर्बलता की स्वीकारोक्ति माना जायेगा और वह आक्रमण के लिए निमंत्रण होगा।''[4]

विभिन्न प्रान्तों में कांग्रेस मंत्रिमंडलों की स्थापना तथा उनमें मुस्लिम लीग को शामिल न करने से मुस्लिम जनता में सामान्यतः कड़वाहट की भावना पैदा हुई थी। जो मुसलमान राजनीतिक रूप से जागृत थे, उनमें कांग्रेस मंत्रिमंडलों के विरूद्ध यह धारणा बनने लगी थी कि मंत्रिमंडल मुस्लिम संस्कृति को मिटाने के लिए कृत संकल्प हैं। इस पृष्ठभूमि में यदि उन्होंने मुस्लिम लीग को शक्तिशाली संगठन के रूप में विकसित करने का प्रयास किया तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। इस प्रयास को बलवती बनाने में लीग के कांग्रेस के विरूद्ध प्रचार ने एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। कांग्रेस शासन की दुर्बलताओं का लीग के नेताओं ने भरपूर प्रचार किया, पीरपुर और शेरीफ रिपोटा में कांग्रेसी मंत्रिमंडलों की तथाकथित अत्याचारों की नमक मिर्च मिला कर चर्चा की गई। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि इन प्रतिवेदनों में किसी भी प्रकार की वस्तुनिष्ठता नहीं थी और न उन्हें किसी भी दृष्टिकोण से निष्पक्ष ही कहा जा सकता था। परन्तु इतना होते हुए भी उन्होने मुस्लिम मस्तिष्क के ऊपर यह प्रभाव अवश्य छोड़ा था कि कांग्रेस शासित प्रान्तों में मुसलमानों के ऊपर जुल्म ढाये जा रहे हैं। इस सम्बन्ध में राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता हुमायूँ कबीर का यह कथन उल्लेखनीय है, (असन्तोष का) आधार काल्पनिक हो सकता था, परन्तु असन्तोष वास्तविक था।[5]

राष्ट्रवादी मुसलमानों के संगठन जमायत–उल–उलमा–ए–हिन्द ने भी इस असन्तोष को देखते हुए कांग्रेस से यह आग्रह किया था कि वह मुस्लिम शिकायतों की जांच के लिए समिति नियुक्त करें। जमायत को वार्धा शिक्षा योजना के कुछ पहलुओं से भी आपत्ति थी।[6]

मुसलमानों में प्रान्तीय स्वायत्त शासन की क्रियान्विति के उपरान्त यह भय घर करने लगा था कि यदि भारत में बहुमत के शासन का सिद्धान्त अपनाया जाता है, तो उन्हें स्थायी रूप से इस देश में अल्पसंख्यक बन कर रहना पड़ेगा। इस भय को पीरपुर प्रतिवेदन ने और भी मजबूत बनाया। उसने कहा कि भारत में स्थिति ब्रिटेन जैसी नहीं है जहाँ बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक बदलते रहते हैं। परन्तु भारत में स्थायी रूप से हिन्दुओं का बहुमत है तथा अन्य सम्प्रदाय स्थायी रूप से अल्पसंख्यक बने रहने के लिए मजबूर हैं।''[7] शेरीफ प्रतिवेदन ने संसदीय प्रणाली की आलोचना करते हुए कहा कि प्रान्तों में उसकी जैसी कार्यान्विति हुई है, उससे यह प्रमाणित हे कि वह उस प्रणाली की अपेक्षा अधिक निकृष्ठ हैं जो प्रान्तीय स्वायत्ता के आरम्भ से पूर्व प्रान्तों में पाई जाती थी।''[8] इन सबका परिणाम यह हुआ कि वे मुसलमान भी जो अब तक लीग में शामिल नहीं थे, उन्होने भी मुस्लिम लीग की सदस्यता स्वीकार कर ली। मुस्लिम जनता से यह कहा जाने लगा कि वे मुस्लिम लीग में संगठित होकर ही न्याय प्राप्त करने की अपेक्षा कर सकते हैं। अक्टूबर 1937 में लखनऊ में हुए लीग के अधिवेशन में पंजाब के प्रधानमंत्री सर सिकन्दर हयात खाँ ने, बंगाल के प्रधानमंत्री फजलुल हक ने तथा असम के प्रधानमंत्री सर मोहम्मद सादुल्ला ने मुस्लिम जनता से यह अपील की कि उन्हें अपनी–अपनी पार्टियों को छोड़कर मुस्लिम लीग में शामिल हो जाना चाहिए। 1937 के चुनाव में लगभग पूर्ण पराभव का सामना करने के बाद मुस्लिम लीग में दुबारा नये जीवन का संचार हो रहा था। जिन्ना जो मुस्लिम जनता से चुनाव परिणामों के अनुसार कटे हुए से दिखाई पड़ते थे, अब आम मुसलमान के बहुत समीप आ चुके थे। यह बात इस तथ्य से प्रमाणित है कि लखनऊ अधिवेशन के उपरान्त लीग की सदस्य संख्या में बड़ी गति क साथ वृद्धि हुई थी। अकेले संयुक्त प्रान्त में एक लाख नये सदस्य बनाये गये थे तथा यू0पी0 में लीग की 90 शाखायें स्थापित हो चुकी थीं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रान्तीय स्वतन्त्रता की कार्यान्वति ने मुस्लिम लीग को भारतीय राजनीति में एक प्रभावी संगठन का रूप देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस संदर्भ में यह स्वाभाविक ही था कि जिन्ना उन्हें 1937 के चुनाव के बाद विस्मृति के गर्भ में विलीन हो जाना चाहिए था, अब तक ऐसे नेता के रूप में निखर कर आये जिनकी किसी भी प्रकार से उपेक्षा नहीं की जा सकती थी।

झाँसी–जालौन–हमीरपुर–उप चुनाव (1937)

1937 के आरम्भ में हुए चुनावों के परिणामों से यह स्पष्ट हो गया था कि भारत के राजनीतिक मानचित्र पर मुस्लिम लीग का अस्तित्व केवल नाममात्र का था। गांधी जी और नेहरू जी कम से कम इस बात से संतोष प्राप्त कर सकते थे कि देश के 6 प्रान्तों के मंत्रिमंडल कांग्रेस के द्वारा नियंत्रित होते हैं। परन्तु ऐसा कोई प्रान्त न था, जिसके शासन को नियंत्रित करने का दावा, जिन्ना साहिब कर सकते अथवा जिसकी रचना में अपनी भूमिका का दावा प्रस्तुत कर सकते ऐसा प्रतीत होता था कि इस स्थिति को स्वीकार करने के अतिरिक्त जिन्ना के पास कोई दूसरा विकल्प नहीं था। परन्तु जिन्ना ऐसे नेता नहीं थे जो इतिहास को अपने सिर के ऊपर से गुजर जाने देते। एक बार उन्होंने कहा था, ''राजनीति में हमें अपना खेल शतरंज की बिसात पर खेलना होता है।''[9] उन्होंने ऐसी चाल चली जिसने वह बाजी जितवा दी जिसे 1937 के आरम्भ में हुई बैलट–बाक्स की लड़ाई ने उन्हें वंचित कर रखा था।

जुलाई 1937 में झाँसी–जालौन–हमीरपुर मुस्लिम निर्वाचन क्षेत्र में एक उप चुनाव हुआ, कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनो के प्रत्याशी एक दूसरे के मुकाबले में खड़े हुए। इस चुनाव को जीतने के लिए दोना दलों ने ऐड़ी–चोटी का जोर लगाया, परन्तु अन्त में विजय लीग के प्रत्याशी के हाथ लगी। जहाँ तक प्रसाधनों का प्रश्न था, कांग्रेस की लीग के साथ कोई तुलना नहीं थी। कांग्रेस के इन विपुल प्रसाधनों के मुकाबले में लीग के पास केवल दो नारे थे– ''इस्लाम खतरे में है'' और ''अल्लाह–ओ–अकबर।'' अपने चुनाव प्रचार में लीग के नेताओं ने किसी राजनीतिक एवं आर्थिक समस्या की चर्चा नहीं की। उन्होने जो कुछ कहा।

उसका सम्बन्ध केवल धार्मिक मतान्धता के साथ था। निःसन्देह इस प्रकार के प्रचार से उन सब लोगो को कष्ट हुआ था। अपने इस कष्ट को नेहरू जी ने एक प्रेस वक्तव्य के द्वारा व्यक्त किया था। नेहरू जी के ही शब्दो में – ''मुस्लिम लीग के नेताओं ने अनेक इश्तहार और अपीलें निकाली थी।'' मैंने इनमें से कुछ को पढ़ा है, परन्तु उनमें से किसी में मैंने राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं का उल्लेख नहीं पाया। उनमें जो नारा लगाया गया है वह यह है कि ''इस्लाम खतरे में है, तथा यह कहा गया कि गैर–मुस्लिम संगठनों ने मुस्लिम लीग के विरूद्ध

प्रत्याशी खड़ा करने का दुस्साहस किया है।..... मुस्लिम लीग के इश्तहारों और बयानों में मिस्टर जिन्ना द्वारा मुस्लिम लीग के अध्यक्ष की हैसियत से जारी की गयी अपील सबसे ऊपर है। उन्होंने अल्लाह और पवित्र कुरान के नाम पर मुस्लिम लीग के प्रत्याशी के लिए समर्थन की अपील की है। मिस्टर जिन्ना को भली भांति मालूम है कि अनेक प्रख्यात मुसलमान, जिनमें जमायत–उल–उलेमा के मौलाना हुसैन अहमद जैसे नेता भी शामिल हैं, कांग्रेस प्रत्याशी का समर्थन कर रहे हैं। क्या इस कारण अब वे मुसलमान नहीं रहे हैं?..... किसी चुनाव में भगवान और धर्म का इस्तेमाल करना एक साधारण कार्यकर्ता के लिए भी असाधारण बात है, मिस्टर जिन्ना द्वारा इस काम को किये जाने की तो काई व्याख्या ही नहीं हो सकती। मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वह प्रश्न के इस पहलू पर विचार करें।..... इसका अर्थ है कि राजनीतिक मामलों में धार्मिक एवं साम्प्रदायिक भावनाओं को उत्तेजित करना, इसका अर्थ है कि देश में अन्धकार युग की ओर प्रत्यावर्तन। क्या मिस्अर जिन्ना को इस बात का अहसास नहीं होता कि इस प्रकार का सम्प्रदायवाद हमें कहाँ ले जायेगा?''[10]

नेहरू जी ने अपनी व्यथा चौधरी खलीकुज्जमा को भी एक पत्र में लिखकर भेजी थी। खली कुज्जमा ने अपने उत्तर में इन बातों की निन्दा की थी, परन्तु उनकी सफाई देते हुए लिखा था कि निर्वाचकों के सम्मुख प्रत्याशियों को यह बताना होता है कि ''वह अपने प्रतिपक्षी जैसे ही अच्छे और पवित्र मुसलमान हैं..... तथा निर्वाचको को अपने समर्थन में खड़ा करने के लिए उन्हें अपना समूचा धार्मिक जोश काम में लाना होता है।''[11]

यह चुनाव यथार्थ में कोई साधारण चुनाव नहीं था। इस चुनाव को हमें इसलिए महत्वपूण्र मानना चाहिए क्योंकि इसमें मुस्लिम लीग ने जो रणनीति अपनाई, वह असाधारण थी। निर्वाचकों को धर्म और सम्प्रदाय के नाम पर गुमराह करो, उनसे पूछो कि तुम्हें क्या पसन्द है..... मसजिद या मन्दिर कुरान या गीता। स्पष्टतः विकल्पों को इस प्रकार प्रस्तुत करने से मुस्लिम जनता की संकीर्ण मतान्धता को ही भड़काया जा सकता था।

इस चुनाव के पूर्व केवल तीन महीने पहले ही काँग्रेसी मंत्रिमंडलों की स्थापना हुई थी, परन्तु इन तीन महीनों के ही कांग्रेसी शासन के बाद जिन्ना ने यह कहना आरम्भ कर दिया था, कि ''मुसलमानों को कांग्रेसी शासन में न्याय की प्राप्ति नहीं हो सकती। बहुसंख्यक सम्प्रदाय ने स्पष्ट रूप से यह प्रदर्शित कर दिया है कि हिन्दुस्तान केवल हिन्दुओं के लिए है। मैं यह कहने का साहस कर सकता हूँ कि काँग्रेस पार्टी की वर्तमान नीति का परिणाम होगा वर्गो के बीच कड़वाहट और साम्प्रदायिक युद्ध।''[12] यथार्थ में अभी तक जुल्मों और अत्याचारों की कोई घटना सुनने में नहीं आई थी, परन्तु कहानी को गढ़ने में और उसे अतिरंजित करके बखानने में बहुत अधिक समय की आवश्यकता नहीं होती। जिन्ना अब अपने सहधर्मियों को यह चेतावनी दे रहे थे, ''ऐसी शक्तियाँ हैं जो आपको धमका सकती हैं, आपको आतंकित कर सकती हैं, आपको डरा सकती हैं..... परन्तु दमन की इस अग्नि–परीक्षा में से निकलने के बाद ही एक ऐसे राष्ट्र का उदय होगा जो अपनी गौरवपूर्ण परम्पराओं पर गर्व कर सकेगा।''[13]

इस चुनाव में लीग के प्रत्याशी की विजय के उपरान्त जिन्ना के हौसले बुलन्द हो गये। अब उनके वक्तव्यों में कांग्रेसी नेताओं के विरूद्ध .....ऐसा लगता है कि वह अपने कन्धों पर समूचे विश्व का उत्तरदायित्व लिए घूमते है और इसलिए उन्हें सब मामलों में अपनी टाँग अड़ाने की आवश्यकता है, उन्हें केवल अपने काम की चिन्ता नहीं है।''[14] मौलाना अब्दुल कलाम आजाद को उन्होने कांग्रेस की ''कठपुतली'' बताया तथा जो मुसलमान उनकी नीतियों से सहमत नहीं थे, वे सब उनकी दृष्टि में ''गद्दार'' और ''हिन्दुओं के ऐजेन्ट'' थे।[15] उन्होने कांग्रेस को एक हिन्दू निकाय घोषित किया और कहा कि ''मुसलमान उसका विश्वास कभी नहीं कर सकते, ''उन्होंने ऐलान किया कि मुसलमान अपने अधिकारों के लिए ''आखिरी दम तक लड़ेंगे, जब तक कि हिन्दू राज के सभी सपने छोड़ नहीं दिए जाते। उन्हें कोई दबा कर नहीं रख सकता और न उन पर कोई अपना आधिपत्य ही स्थापित कर सकता है और वे उस समय तक आत्म समर्पण नहीं करेंगे जब तक उनमें जीवन है। वे (हिन्दू) हम पर जुल्म कर सकते हैं, हम पर अपना दमन चक्र भी चला सकते हैं, परन्तु मुझे विश्वास है कि हम इस अग्नि परीक्षा में से पहले से अधिक श्रेष्ठ और शक्तिशाली हो कर निकलेंगे।''[16]

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि झाँसी–जालौन–हमीरपुर के मुस्लिम निर्वाचन क्षेत्र में हुए इस उप–चुनाव ने मुस्लिम लीग को एक नई रणनीति प्रदान की। अब वह पहले की अपेक्षा अधिक साम्प्रदायिक थी, अब उसकी घोषित नीति थी मुस्लिम जनता में साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाना, तथा कांग्रेस के विरूद्ध घृणा का प्रसार करना। इस चुनाव में प्राप्त विजय से उसके हौंसले बढ़े थे। जैसा कहा जा चुका है यह विजय उसने मिथ्या प्रचार के आधार पर जीती थी। यदि झूठ निर्वाचन में कामयाबी दिला सकता है तो उसके माध्यम से संगठन को भी मजबूत बनाया जा सकता है। फलतः झूठ का पुलिन्दा तैयार किया गया, जिसकी अभिव्यक्ति खुले रूप से पीरपुर और शेरीफ रिपोर्टो में हुई। यह कहा जा चुका है कि इन रिपोर्टो के प्रकाशन से मुस्लिम जनता मुस्लिम लीग क निकट आई, अब वे मुसलमान भी शामिल हुए जो अब तक लीग के साथ नहीं थे। इन मुसलमानों को अपने हितों की रक्षा के लिए एक संगठन चाहिए था और उन हितों के लिए आवाज उठाने वाला एक प्रवक्ता। स्पष्टतः मुस्लिम लीग से उस भूमिका की अपेक्षा की जा सकती थी जिसकी मुसलमानों को आवश्यकता थी। यह भी स्पष्ट है कि उस संगठन को जिन्ना ही नेतृत्व प्रदान कर सकते थे। कालान्तर में वह मुस्लिम हितों के प्रवक्ता बन गये और अल्प समय में ही उन्हें उन हितों के एकमात्र प्रवक्ता के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सी0एच0 फिलिप्स और वेनराइट (सम्पादित), दी पार्टीशन ऑफ इन्डिया, लन्दन, 1970 में एम0एच0 इस्फहार्नो का लेख, पृष्ठ 342।
2. अब्दुल वहीद खाँ की पुस्तक, इण्डिया विन्स फ्रीडम... .... दी अदर साइड, 1961, पृष्ठ 86 में उद्धृत, करांची।
3. स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ जिन्ना, वोल्यूम–प्रथम, पृष्ठ 29।

4. उपरोक्त, पृष्ठ 30।
5. हुमायूँ कबीर, मुस्लिम पोलिटिक्स 1906–42, कलकत्ता, 1943 पृष्ठ 14।
6. लिलिप एण्ड वेनब्राइट (सम्पादित), दि पार्टीशन ऑफ इण्डिया में जेड.एच. जैदी का लेख, ''आस्पेक्ट्स ऑफ मुस्लिम लीग पॉलिसी 1937–47'', लन्दन, 1970, पृ0 260।
7. लिलिप एण्ड वेनब्राइट (सम्पादित), दि पार्टीशन ऑफ इण्डिया में जेड.एच. जैदी का लेख, ''आस्पेक्ट्स ऑफ मुस्लिम लीग पॉलिसी 1937–47'', लन्दन, 1970, पृ0 260।
8. उपरोक्त।
9. स्टार ऑफ इण्डिया, दिसम्बर 31, 1938।
10. फिलिप एण्ड वेनब्राइट (सम्पादित) पुस्तक ''दी पार्टीशन ऑफ इण्डिया लन्दन, 1970 में बी0आर0 नन्दा का लेख'' नेहरू एण्ड दी पार्टीशन ऑफ इण्डिया (1935–47) में उद्धृत्, पृष्ठ 158।
11. उपरोक्त।
12. जमालुद्दीन अहमद, (सम रिसेन्ट स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ मिस्टर जिन्ना) लाहौर, 1946, पृष्ठ 30
13. उपरोक्त, पृष्ठा सं0 40।
14. जमालुद्दीन अहमद, (सम रिसेन्ट स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ मिस्टर जिन्ना) लाहौर, 1946, पृष्ठ 25।
15. उपरोक्त, पृष्ठ 122।
16. दि हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड, अप्रैल 10, 1938।

फुटनोट

A. एम0 सी0 छागला, 'रोजेस इन दिसम्बर', भारतीय विद्याभवन, बम्बई, 1973, पृ079
B. जुलाई, 1937 ई0 में कांग्रेस ने 6 ब्रिटिश प्रान्तों (उत्तर प्रदेश, बिहार, मद्रास, बम्बई, उड़ीसा और मध्य प्रान्त) में अपने मंत्रिमण्डल बना लिये। बाद में कांग्रेस ने उत्तर पश्चिमी सीमाप्रान्त और असम में भी अन्य दलों से मिलकर मंत्रिमण्डल बना लिए।
C. हाफिज मोहम्मद इब्राहीम बिजनौर निर्वाचन क्षेत्र से मुस्लिम लीग के टिकट पर यू0पी0 ऐसेम्बली के सदस्य चुने गये थ। बाद में उन्हाने कांग्रेस की सदस्यता स्वीकार करके दुबारा चुनाव लड़ा।